स्वस्थ समाज का आधार : सदाचार

–आचार्य श्री देवेन्द्र मुनि

धर्म का मेरुदण्ड : आचार

व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के अभ्युदय का मूल आधार आचार है। आचार के आधार पर विकसित विचार जीवन का नियामक और आदर्श होता है, अतः विचार की जन्म-भूमि आचार ही है।

अतीत काल में आचार शब्द बिना किसी विशेषण के भी श्रेष्ठतम आचरण के लिए व्यवहृत हुआ है। शाब्दिक दृष्टि से आचार का अर्थ है–'**आचर्यते इति आचारः**' जो आचरण किया जाय, वह आचार है। यह सदाचार का द्योतक है। आचार्य मनु, आचार्य व्यास प्रभृति विज्ञों ने '**आचारः प्रथमो धर्मः**' कहा है। भगवान महावीर ने द्वादशांगी में 'आचार' को प्रथम स्थान दिया है। श्रुतकेवली भद्रबाहु ने स्पष्ट शब्दों में कहा है '**आचार सभी अंगों का सार है।**' महाभारत में वेदव्यास ने भी यही कहा है कि सभी आगमों में '**आचार**' प्रथम है। ऋषियों ने भी आचार से ही धर्म की उत्पत्ति बताई है– '**आचारप्रभवो धर्मः**'। आचार्य पाणिनि ने प्रभव का अर्थ '**प्रथम प्रकाशन**' किया है। अर्थात् आचार ही धर्म का प्रथम प्रकाशन स्थान है। आचार धर्म का मेरुदण्ड है जिसके बिना धर्म टिक नहीं सकता।

विश्व में जितने भी प्राणी हैं उन सभी प्राणियों में मानव श्रेष्ठ है। सभी मानवों में ज्ञानी श्रेष्ठ है और सभी ज्ञानियों में आचारवान श्रेष्ठ है। आचार मुक्तिमहल में प्रवेश करने का भव्यद्वार है।

आचार-रहित विचार : कल्चर मोती

आचारहीन मानव को वेद भी पवित्र नहीं कर सकते। कहा है– "**आचारहीनं न पुनन्ति वेदाः**" आचार रहित विचार कल्चर मोती के सदृश है, जिसकी चमक-दमक कृत्रिम है। विचारों की तस्वीर चाहे कितनी भी मन-मोहक और चित्ताकर्षक क्यों न हो, पर जब तक आचार के फ्रेम में वह नहीं मढ़ी जायेगी तब तक जीवन-प्रासाद की शोभा नहीं बढ़ेगी। विचारों की सुन्दर तस्वीर को आचार के फ्रेम में मढ़वा दिया जाय तो तस्वीर भी चमक उठेगी और भवन भी खिल उठेगा।

शीशे की आँख स्वयं के देखने के लिए नहीं होती, दिखाने के लिए होती है, वैसे ही आचारहीन ज्ञान आत्म-दर्शन के लिए नहीं होता, किन्तु मात्र अहंकार प्रदर्शन के लिए होता है। प्रशंसा के गीत गाने मात्र से अमृत किसी को अमर नहीं बनाता, पानी-पानी पुकारने से प्यास शान्त नहीं होती। इसी प्रकार सिर्फ शास्त्रों का ज्ञान बघारने से जीवन में दिव्यता नहीं आती।

आचारहीनता से पतन

विराट् सम्पत्ति का अधिपति तथा वेद-वेदांगों का पारंगत होने पर भी सदाचार-रहित होने से रावण '**राक्षस**' जैसे घृणापूर्ण सम्बोधन से पुकारा गया। सुयोधन दुर्योधन के रूप में विश्रुत हुआ। आचार का परित्याग करने से कंस राजा होकर भी कसाई कहलाया और दक्ष दंभी के रूप में प्रसिद्ध हुआ। जबकि सदाचार को धारण करने से शबरी भीलनी होकर भी भक्त बन गई। वाल्मीकि व्याध से वन्दनीय बन गया। अर्जुनमाली हत्यारे से साधु बन गया।

तप का मूल : आचार

आचार की महिमा बताते हुए वैदिक महर्षियों ने कहा–'आचार से विद्या प्राप्त होती है। आयु की अभिवृद्धि होती है, कान्ति और कीर्ति उपलब्ध होती है। ऐसा कौन-सा सद्गुण है जो आचार से प्राप्त न हो। आचार से धर्मरूपी विराट् वृक्ष फलता है। आचार से धर्म और धन ये दोनों ही प्राप्त होते हैं। आचार की शुद्धि होने से सत्त्व की शुद्धि होती है, सत्त्व की शुद्धि होने से चित्त एकाग्र बनता है और चित्त एकाग्र होने से साक्षात् मुक्ति प्राप्त होती है। सभी प्रकार के तप का मूल आचार है।

आचार और सदाचार

भारतीय साहित्य में प्रारम्भ में आचार शब्द सदाचार का ही द्योतक रहा। बाद में आचार के साथ 'सत्' शब्द का प्रयोग इस तथ्य को प्रमाणित करता है कि जब आचार के नाम पर कुछ गलत प्रवृत्तियाँ पनपने लगीं तब श्रेष्ठ आचार को सदाचार और निकृष्ट आचार को दुराचार कहना प्रारंभ किया गया। इस तरह आचार रूपी स्रोत दो धाराओं में प्रवाहित हो गया। उसकी एक धारा ऊर्ध्वमुखी है, तो दूसरी धारा अधोमुखी है। ऊर्ध्वमुखी धारा सदाचार है तो अधोमुखी धारा दुराचार है। शाब्दिक व्युत्पत्ति की दृष्टि से सदाचार शब्द सत् + आचार इन दो शब्दों से मिलकर बना है। जो आचरण या प्रवृत्ति पूर्णरूप से सत् है, शिष्टजन सम्मत है, उचित है वह सदाचार है। सत् या उचित को ही अंग्रेजी में 'राइट' (right) कहा है। जिसका अर्थ है नियमानुसार। जो आचरण नियम के अनुसार वह सदाचार है और जो आचरण नियम के विरुद्ध है, असत् है, वह दुराचार है। दुराचार को ही अनाचार या कदाचार भी कहते हैं।

सदाचार : परिभाषा

आचार्य मनु ने सदाचार की परिभाषा करते हुए लिखा है कि 'जिस देश, काल व समाज में जो आचरण की पवित्र परम्पराएँ चल रही हैं वह सदाचार है।' सज्जन व्यक्तियों के द्वारा जिस पवित्र मार्ग का अनुसरण किया जाता है वह सदाचार है। सदाचार एक ऐसा व्यापक तथा सार्वभौम तत्त्व है जिसे देश, काल की संकीर्ण सीमा आबद्ध नहीं कर सकती। जैसे सहस्ररश्मि सूर्य का चमचमाता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हुआ प्रकाश सभी के लिए उपयोगी है, वैसे ही सदाचार के मूलभूत नियम सभी के लिए आवश्यक व उपयोगी हैं। कितने ही व्यक्ति अपने कुल, परम्परा से प्राप्त आचार को अत्यधिक महत्त्व देते हैं और समझते हैं कि मैं जो कर रहा हूँ वही सदाचार है, पर जो सत् आचरण चाहे वह किसी भी स्रोत से व्यक्त हुआ हो, वह सभी के लिए उपयोगी है।

सदाचार : दुराचार

सदाचार से व्यक्ति श्रेयस् की ओर अग्रसर होता है। सदाचार वह चुम्बक है, जिससे अन्यान्य सद्गुण स्वतः खिंचे चले आते हैं। दुराचार से व्यक्ति प्रेय की ओर अग्रसर होता है। दुराचार से व्यक्ति के सद्गुण उसी तरह नष्ट हो जाते हैं जैसे शीत-दाह से कोमल पौधे झुलस जाते हैं। सदाचारी व्यक्ति यदि दरिद्र भी है तो वह सबके लिए अनुकरणीय है, यदि वह दुर्बल है तो भी प्रशस्त है क्योंकि वह स्वस्थ है। दुराचारी के पास विराट् सम्पत्ति भी है तो भी वह साररहित है।

शोथ से शरीर में स्थूलता आ जाना शरीर की सुदृढ़ता नहीं कही जा सकती अपितु वह शोथ की स्थूलता शारीरिक दुर्बलता का ही प्रतीक है। सदाचार और सद्गुणों का परस्पर अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। सद्गुणों से सदाचार प्रकट होता है और सदाचार से सद्गुण दृढ़ होते हैं। गगनचुम्बी पर्वतमालाओं से ही निर्झर प्रस्फुटित होते हैं और वे सरस सरिताओं के रूप में प्रवाहित होते हैं, वैसे ही उत्कृष्ट सदाचारी के जीवन से ही धर्मरूपी गंगा प्रगट होती है।

सदाचार और सच्चरित्र

सदाचार और चरित्र ये दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। एक ही धातु खण्ड के दो टुकड़े हैं, एक ही भाव के दो रूप हैं। आचार्य शंकर ने शील और सदाचार को अभेद माना है। सदाचार मानव-जीवन की श्रेष्ठ पूँजी है। अद्भुत आभा है। वह श्रेष्ठतम गंध है जो जन-जीवन को सुगन्ध प्रदान करती है। इसीलिए धम्मपद में शील को सर्वश्रेष्ठ गंध कहा है। रामचरित मानस में शील को पताका के समान कहा है। पताका सदा सर्वदा उच्चतम स्थान पर अवस्थित होकर फहराती है वैसे ही सदाचार भी पताका है, जो अपनी स्वच्छता, निर्मलता और पवित्रता के आधार पर फहराती रहती है।

चरित्र को अंग्रेजी में (Character) करेक्टर कहते हैं। मनुष्य का बर्ताव व्यवहार, रहन-सहन, जीवन के नैतिक मानदण्ड व आदर्श ये सब करेक्टर या चरित्र के अन्तर्गत आ जाते हैं। इन्हीं सबका संयुक्त रूप जो स्वयं व समाज के समक्ष व्यक्त होता है, वह आचार या सदाचार है। इसलिए सदाचार व सच्चरित्रता को हम अभिन्न भी कह सकते हैं तथा एक-दूसरे के सम्पूरक भी।

आचार और नीति

आचार के अर्थ में ही पाश्चात्य मनीषियों ने 'नीति' शब्द का प्रयोग किया है। आचारशास्त्र को उन्होंने नीतिशास्त्र कहा है। नैतिकता के अभाव में मानव पशु से भी गया-गुजरा हो जाता है। मानव का क्या कर्त्तव्य है और क्या अकर्त्तव्य है इसका निर्णय नीति के आधार से किया जा सकता है। जो नियम नीतिशास्त्र को कसौटी पर खरे उतरते हैं, वे उपादेय हैं, ग्राह्य हैं और जो नियम नीतिशास्त्र की दृष्टि से अनुचित हैं वे अनुपादेय हैं और अग्राह्य है। मानव जिस समाज में जन्म लेता है उस समाज में जो नैतिक आचार और व्यवहार प्रचलित होता है वह उसे धरोहर के रूप में प्राप्त होता है। मानव में नैतिक आचरण की प्रवृत्ति आदिकाल से रही है। वे नैतिक नियम जो समाज में प्रचलित हैं उनके औचित्य और अनौचित्य पर चिन्तन कर जीवन के अन्तिम उच्च आदर्श पर नैतिक नियम आधृत होते हैं।

यद्यपि आचार या नीति शब्द के अर्थ कुछ भिन्न भी हैं, आचार सम्पूर्ण जीवन के क्रिया-कलाप से सम्बन्ध रखता है, जबकि 'नीति' आचार के साथ विचार को भी ग्रहण कर लेती है। 'नीति' में सामयिक, देश-काल की अनुकूलता का विशेष ध्यान रखा जाता है जबकि 'आचार' में कुछ शाश्वत व स्थायी सिद्धान्त कार्य करते हैं। नीति, व्यक्ति व समाज के सम्बन्धों पर जोर देती है, आचार व्यक्ति व ईश्वर सत्ता (आत्मा-परमात्मा के सम्बन्ध पर) के अधिक निकट रहता है। पश्चिमी विद्वान-देकार्ते (Descartes), लॉक (Locke) आदि के मतानुसार धर्म ही नीति का मूल है, जबकि कांट (Kant) के अनुसार नीति मनुष्य को धर्म की ओर ले जाती है। नीति का लक्ष्य 'चरित्र शुद्धि' है और चरित्र शुद्धि से ही धर्म की आराधना होती है। इस प्रकार 'नीति' और 'आचार' के लक्ष्य में प्रायः समानता है। भारतीय धर्म आचार को नीति से व नीति को आचार से नियंत्रित रखने पर बल देते हैं।

पश्चिम के प्रसिद्ध नीतिशास्त्री मैकेंजी (Mackenzie) का कहना है कि 'नीति' एक क्रिया है, धर्म मनुष्य का सत्संकल्प है, नीति उस संकल्प को क्रियान्वित करती है, इसलिए नीति को नियामक विज्ञान (Normative Science) कहा जाता है, और वह धर्म, सदाचार का ही अन्तिम अंग है।

आचार और विचार

आचार और विचार–ये दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। विश्व में जितनी भी विचारधाराएँ प्रचलित हैं, उन्होंने आचार और विचार को महत्त्व दिया है। व्यक्तित्व के पूर्ण विकास के लिये आचार और विचार दोनों का विकास अपेक्षित है। जब तक आचार के विकास के लिए पवित्र विचार नहीं होंगे, तब तक आचार सदाचार नहीं होगा। जिन विचारों के पीछे आचार का दिव्य-आलोक नहीं है, वे विचार व्यक्तित्व-निर्माण में अक्षम हैं। जब आचार और विचार में एकरूपता होती है, वे परस्पर एक-दूसरे से सम्बन्धित होते हैं, तभी विकास के नित्य-नूतन द्वार उद्घाटित होते हैं।

●●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रात्रि भोजन के घातक परिणाम

- सरोवर में खिलते कमल को देखिये–जब सूर्य की कोमल किरणों का स्पर्श और प्रकाश मिलता है तभी वह खिलता है, सूर्यास्त होते ही उसकी विकसित पंखुड़ियाँ अपने आप सिकुड़ जाती हैं। सूर्यास्त होने पर फूल मुर्झा जाते हैं। आयुर्वेद के अनुसार सूर्यास्त होने पर हृदय कमल तथा नाभिकमल मुर्झा जाता है। संकुचित हो जाता है, और उदर में गया हुआ भोजन पचने में बहुत कठिन होता है।

- तोते, चिड़िया आदि पक्षियों को देखिये–उषा की लाली चमकने पर चहक-चहक कर एक दूसरे को जगाते हैं, और सूर्य की किरणें धरती पर फैलने के पश्चात् चुग्गा-दाना की खोज में आकाश में उड़ते हुए दूर-दूर तक चले जाते हैं, किन्तु संध्या होते होते वे दिनभर उड़ने वाले पक्षी अपने-अपने घोंसलों में लौट आते हैं। रात का अँधेरा छाने से पहले पहले वे अपने घोंसलों में घुस जाते हैं। और फिर रातभर कुछ खाना नहीं, पीना नहीं। शान्ति के साथ विश्राम करते हैं।

- प्रकृति के नियम सभी के लिए समान हैं। किन्तु मनुष्य सदा ही प्रकृति के साथ छेड़-छाड़ और उसके नियमों का मजाक करता रहा है। परिणाम स्वरूप वह आधि, व्याधि, रोग, पीड़ा और संकटों से घिरता जाता है।

- आज संसार के प्रायः सभी स्वास्थ्य विशेषज्ञ यह मानने लगे हैं कि मनुष्य को सूर्य प्रकाश में ही अपना भोजन ग्रहण कर लेना चाहिए। सूर्य की ऊर्जा/ऊष्मा से भोजन ठीक से पचता है। सूर्यास्त के बाद पाचन क्रिया कमजोर पड़ जाती है, जठराग्नि मंद हो जाती है, अतः रात में किया हुआ भोजन दुष्पाच्य होता है, उससे अजीर्ण, कब्ज गैस आदि रोग पैदा होते हैं।

- रात्रि भोजन से आरोग्य बिगड़ता है। आलस्य बढ़ता है। काम वासना बढ़ती है। शरीर में मुटापा, (चर्बी) कोलस्टोरल आदि बढ़ते हैं।

- रात में आप चाहे जितना प्रकाश कर लेवें, वह आपके शरीर व पाचन संस्थान को ऊष्मा नहीं दे सकता। बिजली की ऊष्मा से कभी भी खाया हुआ भोजन हजम नहीं हो सकता।

- जैन सूत्रों में बताया है–ऐसे बहुत से सूक्ष्म जीव हैं, उड़ने वाले कीट पतंग हैं, जो आँखों से दिखाई नहीं देते किन्तु भोजन में आकर गिर जाते हैं और वे हमारे उदर में चले जाते हैं। उन जहरीले कीट पतंगों के कारण शरीर में अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं।

- योगशास्त्रकार आचार्य हेमचन्द्र ने कहा है– रात में भोजन करने से भोजन के साथ जू आ जाने से जलोदर, मक्खी आ जाने से उल्टी, चींटी (कीड़ें) आने से बुद्धिमंदता, मकड़ी आने से कुष्ट (महा कोढ़) होता है। कोई कांटा आदि आ जाने से तालु में छेद हो जाता है। मच्छर आने से ज्वर, विषैला जन्तु आने से जहर–परिणाम स्वरूप मृत्यु और कैंसर आदि रोग होते हैं।

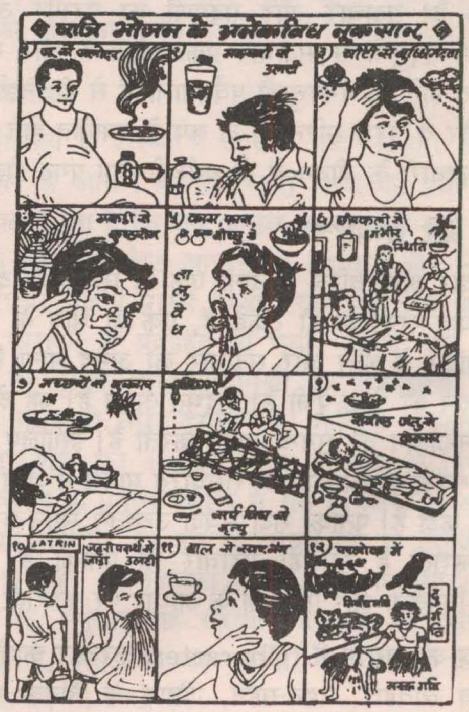

देखिये संलग्न चित्र–

–उपाध्याय श्री पुष्कर मुनि के प्रवचन
('रात्रि भोजन के घातक और संघातक परिणाम' से)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org